Shodhaamrit, Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026 : Page No.-149-153

शोधामृत

(कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका)

ISSN : 3048-9296 (Online)
3049-2890 (Print)
IIFS Impact Factor-4.0
Vol.-3; issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No- 149-153
©2026 Shodhaamrit
https://shodhaamrit.gyanvividha.com

Author's :

1. चन्द्र प्रकाश राठौर
शोधार्थी, द. आई. सी. एफ. ए. आई. विश्वविद्यालय, रायपुर, छ0ग0 (भारत).

2. डॉ. जया सिंह
शोध निर्देशक, सह-प्राध्यापक एवं विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, द. आई. सी. एफ. ए. आई. विश्वविद्यालय, रायपुर, छ0ग0 (भारत).

Corresponding Author :

चन्द्र प्रकाश राठौर
शोधार्थी, द. आई. सी. एफ. ए. आई. विश्वविद्यालय, रायपुर, छ0ग0 (भारत).

विनोद कुमार शुक्ल के कथा संसार में भारतीय ज्ञान परंम्परा : एक अध्ययन

सारांश : कथा मनुष्य की आदिम अवस्था से संबंध है, यह तब उत्पन्न हुई थी जब मनुष्य पढ़ना भी नही सीखा था। तब साहित्य के मूलरुप उत्पन्न हो रहे थे इसलिए कथा या कहानियाँ हमारे प्राचीन प्रवृत्तियों की अपील करती है। भारतीय ज्ञान परम्परा की यात्रा वेदों और पुरणों से आरंभ होकर महाकाव्यों, जातक कथाओं और लोक कथाओं से होते हुए आधुनिक उपन्यास कहानी तक यह परंपरा सामाज के यथार्थ व जीवन मूल्यों की संवाहक रही है। इस यात्रा में विनोद कुमार शुक्ल की भूमिका सबसे निर्णायक है। भारतीय ज्ञान परंपरा केवल प्राचीन ग्रंथों का संचयन नही बल्कि वह जीवन दृष्टि है। जो मनुष्य को प्रकृति, समाज और स्वयं से जोड़ती है। शुक्ल जी के उपन्यासों "नौकर की कमीज" 'दीवार में एक खिड़की रहती थी", और खिलेगा तो देखेंगे" में यह परंपरा 'अपरिग्रह', 'अद्वैत' और 'प्रकृति - सायुज्य' के रूप में उभरती है। उनके यहाँ जादूई यथार्थ वाद वास्तव में भारतीय लोक चेतना का ही विस्तार है। यह निष्कर्ष निकलता है कि शुक्ल जी का साहित्य भारतीय ज्ञान परंपरा के उस 'सहज' मार्ग को पुष्ट करता है, जहाँ मनुष्य की गरिमा उसके उपलब्ध वस्तुओं से नही, बल्कि उसके बोध से तय होती है।

बीज शब्द : कथा संसार, जीवन-दर्शन, आधुनिकता, भारतीय ज्ञान परंपरा।

प्रस्तावना : शुक्ल जी के कथा संसार में भारतीय ज्ञान परंपरा का समावेश उसकी अनूठी लेखन से ही रोजमर्रा के जीवन की सूक्ष्म आलोकन और समान्य चीजों में असाधरण अर्थ खोजने की दृष्टि के द्वारा होता है। इसकी रचनाएँ सधारण तौर पर प्राचीन ग्रंथों की बात नही करती, बल्कि आधुनिक संदर्भों में भारतीय जीवन दृष्टि और ज्ञान की गहराई को पकड़ती है। इस उपन्यास कार के कथा संसार में भारतीय ज्ञान परपंरा का प्रतिबिम्ब उसकी सरल, सहज और गहरी संवेदनात्मक शैली में झलक दिखती है। वे जीवन की साधारण घटनाओं में भी असीम और दाशर्निक सत्य की खोज निकालने के लिए जानने जाते हैं। इसके कथा संसार को अकसर जादूई यथार्थवाद की श्रेणी में रखा जाता है,

परन्तु गहराई से विशलेषण करने पर यह ज्ञात होता है कि उसकी जड़े 'भारतीय ज्ञान परंपरा' और लोक जीवन के दर्शन में गहरे तक धसी हुई है। भारतीय ज्ञान परंपरा केवल वेदों या उपनिषदों का अध्ययन नहीं है, बल्कि वह जीवन जीने की कला है। भारतीय ज्ञान परंपरा मूल मंत्र 'सर्वजन हिताय' और 'वसुधैव कुटुंबकम' रहा है इसके साहित्य में यह दृष्टि किसी उपदेश की तरह नही, बल्कि एक साधारण आदमी के दैनिक संधर्ष और उसकी संवेदना में घुली-मिली दिखाई देती है। इसके पात्र बहुत छोटे है लेकिन उकनी चिंताएं और बोध विराट है।

मूल आलेख : भारतीय ज्ञान परंपरा के मुख्य तत्व -

- साधारण में आधारण की खोज - शुक्ल जी कहानियाँ छोटे शहरों के समान्य पात्रों जैसे - क्लर्क व शिक्षकों के माध्यम से मध्यवर्गीय जीवन के संघर्षों और आकाक्षाओं को उजागर करती है। वे एक कौए की चोच में रोटी के टुकड़े जैसी साधारण दृष्य में भी गहरे मानवीय सत्य और सामाजिक न्याय के प्रश्न ढूंढ लेते है। शुक्ल जी यह सिखाते है कि मोक्ष या परमज्ञान हिमालय की कंदराओं में नही, बल्कि रोजमर्रा के जीवन के संघर्षों और सुखियों में निहित है।1 गरीबी की यह त्रासदी-सिर्फ मजदूर व किसान नही भागते परन्तु निम्नमध्यवर्ग के गुरुजी जैसे पात्र भी भागते है। फर्क इतना रहता है कि अतिनिम्नवर्ग की गरीबी सार्वजनिक रुप से दिखाई देती है और निम्नमध्यवर्ग की गरीब परिवार के दायरे में ढ़की रहती है - "रोटियाँ कम होती है तो मुन्ने के हिस्से की रोटी कोई नही छुता था मुन्नी तो कटोरी भर फलहारी से दिनभर उपवास रह लेती थी। मुन्ना के कारण भात कम बनने लगा था पर भात खाना सबको अच्छा लगता था'।[2] 'नौकर की कमीज' में राम जी राय नामक पात्र सामाज की सीमाओं में रहते हुए भी आत्म सम्मान व ईमानदारी को सर्वपरि मानता है। "कमीज फटी थी पर आदमी फटा नही था"[3]। यह पंक्ति गीता के निष्काम कर्मयोग की व्याखा सी प्रतित होती है - कर्म करते रहो फल की चिंता मत करो।
- अद्वैत दृष्टि मनुष्य और प्रकृति का एकात्म भाव – इस ज्ञान परंपरा का मूल आधार अद्वैत है, जहाँ आत्मा और परमात्मा या मनुष्य व प्रकृति के बीच कोइ भेद नही माना है। यह शुक्ल जी की कहानियों और उपन्यासों जैसे 'नौकर की कमीज' 'खिलेगा तो देखेगें' में यह दर्शन स्पष्ट दिखाई देता है।
- जड़ में चेतना का वास - शुक्ल जी कहानियों में दीवारे बोलती हैं खिड़कियाँ मनुष्य के एकाकीपन की साथी है और पेड़ परिवार के सदस्य की तरह व्यवहार करती है। यह सब कुछ ब्रम्ह है, इस भारतीय अवधारणा का आधुनिक विस्तार है, जहाँ पर प्रकृति के प्रति संवेदनशीलता अनिवार्य है। 'दिवार में एक खिड़की रहती थी' इस उपन्यास में "वह खिड़की असल में दिवार में नही थी, वह हमारे देखने में थी। अगर हम देखना चाहे तो दिवार के पार भी एक पूरी दुनिया है"।[4] जहाँ स्थूल जगत (दिवार) के पीछे सूक्ष्म जगत (खिड़की) की सत्ता स्वीकार की गई है। ज्ञान मनुष्य की दृष्टि में है, वस्तु में नही। इसमे शुक्ल जी 'उपनिषदों' के उस ज्ञान की ओर संकेत करते है।
- पारिस्थितिक चेतना - इसका नायक प्रकृति का उपयोग नही करता, बल्कि उसके साथ सह-अस्तित्व में रहता है। यह पश्चिमी संस्कृति के विपरीत भारतीय 'अपरिग्रह' और 'सह जीवन' का मार्ग है। यह उपन्यास "नौकर की कमीज" में मनुष्य की अस्तित्व व भारतीय 'साधना' के भाव को दर्शाता है। "कमीज पहन लेना सिर्फ बदन ढ़कना नहीं, बल्कि उस व्यवस्था का हिस्सा हो जाना, जो आपको छोटा बनाता है"।[5] इस भारतीय ज्ञान परंपरा में शुक्ल जी यहाँ सत्ता व व्यक्ति के बीच में दृढ़ को अत्यंत सादगी से दिखाते हैं। नायक संतू का अपनी पहचान ढूढ़ना स्वयं की खोज की प्रक्रिया है।
- भाषा और मौन की पंरपरा - इस ज्ञान परंपरा में मौन को वाणी से ऊँचा स्थान दिया गया है। शुक्ल जी के कथा साहित्य की सबसे बड़ी शक्ती उनकी 'मितभाषिता' है। इन कहानियों में भाषा की विविध भंगिमायें बनती है और टूटती है। इस संबंध में रघुवर सहाय ने लिखा है कि -"गद्य को तोड़ने ओर बनाने का अपना एक अलग

मजा है - मैने पाया कि वह भी उतना ही तृप्तकार है, बल्कि कुछ अधिक ही है। क्योकि उसे जीतना तोडा वह उतना ही सावर्जनिक बनाया जाता है"।[6]

- वाक् व अर्थ - इनकी भाषा कबीर की ब्रजबासियों की तरह सरल होते हुए भी गहरे अर्थ समेटे रहती है। वे छोटे-छोटे वाक्यों से बड़े समाजिक यथार्थ को उघाड़ देती है।
- लोक संवेदना - उनकी भाषा छत्तीसगढ़ की मिट्टी की सोंधी खुशबु लिये हुए है, जो 'स्थानीयता' के माध्यम से सर्वभौमिकता' तक पहुँचाती है, यह 'वसुधैव कुटुंबकम्' की प्रक्रिया है, यहाँ आप अपने जड़ों से जुड़कर पूरे विश्व के हो सकते है। शुक्ल जी भाषा अमूर्त में मूर्त की कल्पना। इन्हें निरिपेक्ष विषय वस्तुओं सपेक्ष रुप में दिखाने की महारत हासिल है। जैसे "गडढ़े के अंदर बहुत बड़ा मैदान है, लगता ही नही है कि गडढ़े के अंदर है गडढ़े के अंदर की जगह में भी सबकी जगह निश्चित है।[7]
- समय और स्मृति का दर्शन-भारतीय-काल बोध-रेखीय न होकर चक्रीय है। शुक्ल जी की कहानियों में समय स्थित सा लगता है। 'दिवार में एक खिड़की रहती थी' उपवास में समय की गति वैसी नही है जैसी आधुनिक दौड़-भाग वाले जीवन में होती है। यह 'काल' के उस भारतीय रुप को दर्शाती है, जहाँ भूत, भविष्य और वर्तमान एक ही क्षण में उपस्थित हो सकते है। यथार्थ जीवन की भयावहता इस 'खिलेगा तो देखेंगे' उपन्यास में इस तरह की थी की जहाँ अपने होने न होने का बोध काई मतलब नही रहता। किसी भी तरह किन्ही भी उपायों के साथ जीवन को बस काट देना है। आगे के जीवन की परवाह के बीना उधारी लेने से आज का पेट भर जाता था । आगे खाली पेट के दिन बढ़ जाते थे उधारी खाते-खाते जिन्दा रहने की बचत हो जाती थी, जीना हो जाता था। वर्तमान में सभी लोगों के जीवंत होने की भविष्य में सभी लोगों की मृत्यु थी। भविष्य में जन्म रहता है इसकी याद नही आती थी अगर आती थी तो कर्ज पटाना पड़ता था।[8]
- मानवीय संवेदना और करुणा - यह ज्ञान परंपरा करुणा को सर्वोच्य ज्ञान मानती है। शुक्ल जी के पात्रों के एक अपरिचित प्रति थी वैसी ही आजीवन है। जैसी अपने परिजनों या परिवारों के प्रति। यह 'वसुधैव कुटुंबकम्' का व्यावहारिक धरातल है। उनके कथा संसार में अजनबीपन के लिए कोई स्थान नही क्योंकि वहाँ सब कुछ एक दुसरे से जुड़ा हुआ है। "हताशा से एक व्यक्ति बैठ गया था, व्यक्ति को मैं नही जानता था, हताशा को जानता था"।[9] भारतीय परंपरा में व्यक्ति की पहचान उसकी दुःख और उसकी मानवीय संवेदना से होती है, न की उसके नाम या पद से जहाँ ज्ञान का अर्थ सहानभूति से है।
- प्रकृति के साथ तदास्य उपभोग नही, अपितु सहअस्तित्व - पाश्चात्य संसार में प्रकृति को संधान माना गया, जबकि भारतीय पंरपरा में वह 'माता' और 'शखा' है इस उपन्यासकार के उपन्यास 'खिलेगा तो देखेंगे' में प्रकृति व मुनष्य के बीच कोई विभाजन रेखा नही है। "एक पेड़ का घर के भीतर होना उतना ही स्वभाविक है जितना किसी सदस्य का होना"। कमरे तक हय दृष्टि प्राचीन वन संस्कृति का विस्तार है। जहाँ यह मनुष्य स्वयं को ब्रम्हाड़ से अलग नही मानता है। पहुँचने के लिए सिढ़ियों पर चलना उसे वृक्ष की शाखाओं पर चढ़ना लगता है - "खाट पर लेटने से खिडकी से सही पीपल की शाखा दिखती थी जब शाखा थोड़ी भी नही हिलती , यहाँ तक की एक पक्षी भी नही हिलता तब शाखा को लगातर देखते रहने पर दो-तीन बार उसे लगा की कमरा भी पीपल के पेड़ पर बना है"।[10]
- न्यूनतमवाद - इस उपन्यास "नौकर की कमीज" का नायक संतू बाबू अभाव में दुःखी नही है। वह अभाव के बीच एक ऐसी 'निस्पृच्ता' विकसीत करता है। जो उसे व्यवस्था के शोपन के बजाय आंतरिक रुप से स्वतंत्र रखती हैं। 'तेन व्यक्तेन भुंजिया' का अर्थ यह त्यागपूर्वक भोग की उपनिषदीय सीख का आधुनिक हिन्दी रुपांतरण है।
- लोक की जादुई यथार्थवादिता - इन कहानियों में चमत्कार नही, बल्कि सहजता अर्थात, यथार्थ का जादू है। लोककथाओं में यथार्थ व फैतासी के बीच कोई दिवार नही होती हैं। उनकी शैली श्रृति और स्मृति की

मौलिक परंपरा के नजदीक है, जहाँ कथा कहने का ढ़ग सुनने वाले को एक सामूहिक चेतना से जोड़ देता है। "वह इतना डर गया था कि उसे लगा की वह अपनी दे हके भीतर कही छुप गया है"।[11]

- .लोकजीवन और भारतीयता का अभाव - "हरिया हरक्यूलिस" की हैरान में गांव और शहर के जीवन के बीच विरोध दिखता है, परन्तु हरिया का चरित्र लोकजीवन की सच्चाई और आत्यमीयता का प्रतिनिधित्व करता है। "हरिया के लिए जीवन कठिन था, पर वह कठिनाईयों में भी गीत गाता था" यह भावना भारतीय लोक ज्ञान की जड़ों से उपजी है यहाँ जीवन के दुःख भी आध्यात्मिकता अर्थ को उभारते है।[12]
- आत्म साक्षात्कार और मौन का दर्शन - 'दीवार में एक खिड़की रहती थी' में पात्र अपने अंदर की दृष्टि खोजता है। खिड़की यहाँ आत्मा का प्रतीक है - अंतर-जगत की ओर खुलने वाला मार्ग है। "खिड़की से आती रोशनी कमरे में नहीं, आदमी के भीतर उजाला करती है"। यह कथन उपनिषदों के आत्मज्योति के विचार की याद दिलाता है।[13]
- समाजिक यथार्थ और आध्यात्मिक दृष्टि का समन्वय - शुक्ल जी का कथा संसार आधुनिक समाज की भौतिक जटिलताओं के बीच अध्यात्मिक समाधान की खोज करता है। उनके पात्र यह बताते है कि ज्ञान कोई दार्शनिक बौद्विकता नही, बल्कि संवेदना वह आत्मीयता का विस्तार है। यह उजागर यकरते हे कि भारतीय ज्ञान परंपरा आज भी आधुनिक समाज के भीतर जीवित है - बस उसे देखने की दृष्टि चाहिए। शुक्ल जी के 'खिलेगा को देखेंगे' उपन्यास में गाँव में दीना दर्जी कपड़े सीलने का काम करता है वह गरीबी से जी रहे लोगों के लिए अपनी खुद की गरीबी से संघर्ष करता हुआ से जी रहे लोगों के लिए अपनी खुद की गरीबी से संघर्ष करता हुआ कुछ इस तरह कामना करता है कि एक दिन वह सबके कपडे बना सकेगा। उसके मशीन की आवाज दरशल उसकी जिंदगी के चलते रहने का प्रतीक है। "दीना ने कहा कि वह कम्पनी छाती के ऊपर हाथ रख धक्-धक् सनुकर सोता है धक्-धक् उसकी सिलाई मशीन है। जो अपने आप चलती है। वह सोता रहता है, बजरंगबली के भरोसे और धक्-धक् आत्म के कपड़े की सिलाई चलती है"।[14]

शोध का उद्देश्य -

- विनोद कुमार शुक्ल के कथा संसार में प्रकृति और मुनष्य के अंनत संबंधों को भारतीय अद्वैत दृष्टि से जोड़कर उभारना।
- इस उपन्यासकार के कथा साहित्य में निहित भारतीय दार्शनिक तत्वों की पहचान करना।

शोध की पद्वति - इस शोध के लिए गुणात्मक और विशलेषणात्म्क पद्वति का प्रयोग किया गया जायेगा।

- तुलनात्मक अध्ययन - भारतीय ज्ञान परंपरा के प्राचीन मूल्यों (जैसे अद्वैत, प्रकृति, प्रेम और संतोष) की तुलना उसके पात्रों के आधुनिक संघर्षों से करना
- मूल पाठ का विशलेषण - उनकी कृतियों में जैसे नौकर की कमीज, खिलेगा तो देखेंगे और दीवार में एक खिड़की रहती थी का सूक्ष्म विशलेषण
- अंत विषयी दुष्टिकोण- शुक्ल जी के साहित्य को समझने के लिए केवल साहित्य ही नही, बल्कि दार्शनिक और समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण का उपयोग होगा ।

निष्कर्ष : इस कथा संसार से यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय ज्ञान परपंरा केवल वेदों या उपनिषदों के में नहीं बल्कि एक समान्य आदमी की दिनचर्या रोजमर्रा और उसकी संवेदनाओं में जीवित है। इनका साहित्य जड़ों की ओर वापसी का यह संदेश देता है कि आधुनिकता का अर्थ अपने परपंरा का त्याग करना नहीं, बल्कि उसे नये संदर्भों में जीना है इस मशीनीकरण के युग में शुक्ल जी के पात्र अपने मौलिक मासूमियत बचाये रखते है, जो भारतीय मूल्यों की सबसे बड़ी जीत है। यह निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय दर्शन को व्यक्त करने के लिए भारी मरहम शब्दों की नही, बल्कि 'मौन' और 'सहजता' की आवश्यकता होती है यानी भाषा का नया व्याकरण इसका कथा संसार भारतीय ज्ञान परंपरा के उन सूत्रों पुनःजीवित करता है, जो मनुष्य को मशीन बनने से रोकता है और

उसे उसके मूल स्वभाव 'करुणा' और 'सहचर्य' कि ओर ले जाते है।

संदर्भ सूची :

1. शुक्ल, विनोद कुमार। 'सब कुछ होना बचा रहेगा'। राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ संख्या 12 राज
2. शुक्ल, विनोद कुमार। 'खिलेगा तो देखेगें' । राजकमल प्रकाशन 1961, पृष्ठ संख्या 41
3. शुक्ल, विनोद कुमार। 'दीवार में एक खिड़की रहती थी'। राजकमल प्रकाशन पृष्ठ सख्या 12-14
4. शुक्ल, विनोद कुमार। 'नौकर की कमीज'। राजकुमार प्रकाशन, पहला संस्करण 1994, सातवाँ संस्करण, 2017 पृष्ठ संख्या 45
5. रघुवीर, सहाय। 'रास्ता इधर से है'। पृष्ठ संख्या 9
6. शुक्ल, विनोद कुमार। ' महाविद्यालय'। पृष्ठ संख्या 43
7. शुक्ल, विनोद कुमार। 'नौकर की कमीज'। वाणी प्रकाशन पहला संस्करण, 1994। सातवाँ प्रकाशन 2017 पृष्ठ संख्या 87
8. शुक्ल, विनोद कुमार। 'नौकर की कमीज'। नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन 1979। पृष्ठ संख्या 214
9. शुक्ल, विनोद कुमार। 'खिलेगा तो देखेगे'। नई दिल्ली राजकमल प्रकाशन 2001। पृष्ठ संख्या 206 नई दिल्ली। राजकुमार प्रकाशन, पहला संस्करण 1994।
10. शुक्ल, विनोद कुमार। ' सब कुछ होना बचा रहेगा'। राजकुमार प्रकाशन। पृष्ठ संख्या 21
11. शुक्ल, विनोद कुमार। 'पेड़ पर कमरा'। वाणी प्रकाशन। पृष्ठ संख्या 8
12. शुक्ल, विनोद कुमार। 'दीवार में एक खिड़की रहती थी'। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997। पृष्ठ संख्या 45
13. शुक्ल, विनोद कुमार। ' हरिया हरक्यूलिस की हैरानी'। राजकुमार प्रकाशन, 2000। पृष्ठ संख्या 56
14. शुक्ल, विनोद कुमार। ' नौकर की कमीज'। राजकुमार प्रकाशन, पहला संस्करण 1994।
15. शुक्ल, विनोद कुमार। 'दीवार में एक खिड़की रहती थी'। राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1997। पृष्ठ संख्या 42
16. शुक्ल, विनोद कुमार। 'खिलेगा तो देखेगे'। राजकमल प्रकाशन 1961। पृष्ठ 78

•